ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.18, NO.1, JAN-JUNE,2023 /58

प्रमुख काव्य शास्त्रियों के अनुसार काव्य प्रयोजन

*प्रेमलता मौर्या एवं ** डॉ. रवि कुमार चौरसिया
*शोधछात्रा एवं ** शोध पर्यवेक्षक
का. सु. साकेत स्नाकोत्तर महाविद्यालय अयोध्या

काव्य–प्रयोजन

काव्य सोद्देश्य होता है क्योंकि कोई भी मनुष्य किसी का र्य में तभी प्रवृत्त होता है जब उसे उसम इष्टसाधनता और कृतिसाध्यता का ज्ञान हो। 'इदम्मदिष्टसाधनम्' यह काम मेरे लिए इष्ट का साधन है, अतएव इसके करने में मेरे मनोरथ की सिद्धि होगी अथवा इस कार्य की कृतिसाध्यता भी है, मैं इसे भलह–भांति कर सकता हूँ। इस प्रकार का उभयविब ज्ञान होने पर ही मनुष्य किसी कार्य में प्रवृत्त होता है।

प्रयोजन के बिना तो मूर्ख व्यक्ति भी किसी कार्य के लिए उद्यत नहीं होता है 'प्रयोजनं ह्यनुद्दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते'। जैसे लौकि कार्यों को करते समय कर्ता का कोई न कोई उद्देश्य होता है, वैसे ही काव्य के रचयिता के हृदय में प्रयोजन रहता है। जो काव्य के प्रयोजन हैं वे काव्यशास्त्र के प्रयोजन भी हैं, क्योंकि काव्यशास्त्र काव्य का अंग है। काव्यशास्त्रीय आचार्य काव्य प्रयोजनों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करते हैं। उन्होने एक से लेकर सात तक काव्य प्रयोजन माने हैं।

वाग्भट प्रथम2 और आनन्दवर्धन3 ने एक प्रयोजन माना है। वाग्भट कीर्ति और आनन्दवर्धन प्रीति को काव्य का प्रयोजन मानते हैं। दो प्रयोजन मानने वाले आचार्यों में वामन4 और भोज5 हैं। वामन और भोज कीर्ति व प्रीति दोनो को काव्यप्रयोजन के रूप में स्वीकार करते हैं।

तीन प्रयोजनवादी आचार्य हेमचन्द्र और अग्निपुराणकार हैं। हेमचन्द्र आनन्द, यश और कान्तासम्मित उपदेश को ही काव्य का प्रयोजन मानते हैं। अग्निपुराणकार धर्म, अर्थ, काम को काव्य–प्रयोजनों के रूप में स्वीकार करते हैं। चार प्रयोजन मानने वाले आचार्य रामचन्द्र–गुणचन्द्र है। उन्होने पुरूषार्थ चतुष्ट्य–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को काव्य प्रयोजन के रूप में स्वीकार कर मोक्ष को गौण प्रयोजन के रूप में स्वीकार किया है। रूद्रट पाँच काव्य प्रयोजनों को स्वीकार करते हैं। उन्होने पुरूषार्थ–चतुष्ट्य के साथ–साथ शीघ्र और सरलता पूर्वक ज्ञान को काव्य के प्रयोजन के रूप में स्वीकार किया है। छह प्रयोजनों को मानने वाले आचार्यों में कुन्तक और मम्मट है। कुन्तक धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, व्यवहार ज्ञान, आनन्दानुभूति को काव्य के प्रयोजन मानते हैं। मम्मट ने यश, अर्थप्राप्ति, व्यवहारिक ज्ञान, अमंगलनाश, परमानन्द तथा कान्तासम्मित उपदेश को काव्य के प्रयोजन कहे हैं।

आचार्य भरत और भामह ने काव्य के सर्वाधिक प्रयोजन सात का वर्णन किया है। भरत के अनुसार काव्य हितकारी उपदेश देने वाला धैर्य, मनोविनोद और सुख प्रदाता, दुख पीड़ित तथा शोकसन्तप्त व्यक्तियों को विश्रान्ति देने वाला, धर्म, यश तथा आयु को बढ़ाने वाला है। भामह ने पुरूषार्थ चतुष्ट्य के अतिरिक्त समस्त कलाओं में नैपुण्य तथा कीर्ति एवं प्रीति को काव्य का प्रयोजन कहा है।

विश्वनाथ – विश्वनाथ ने काव्य के चार प्रयोजन धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का वर्णन किया है–

चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निगमते।।

यहां विश्वनाथ भामह के मत से प्रभावित हैं क्योंकि भामह ने सर्वप्रथम चतुर्वर्ग को काव्य का प्रयोजन माना है। विश्वनाथ ने उनका अनुसरण करके चतुर्वर्ग को प्रयोजन कहा है। परन्तु विश्वनाथ ही ऐसे आचार्य है जिन्होने लोक के परम प्रयोजन पुरूषार्थ चतुष्ट्य को ही काव्य के परम प्रयोजन के रूप में स्वीकार किया है। दर्पणकार का कथन है कि काव्य भी शिक्षक की भांति उपदेष्टा का ही कार्य करता है अन्तर इतना अवश्य है कि शिक्षक साक्षात् उपदेश देता है और काव्य परम्परया उपदेश देता है। परम्परया का अभिप्राय यह है जिस प्रकार पाठशाला में शिक्षक गुणी को पुरस्कार प्रदान कर और दुष्ट को दण्ड देकर दूसरों के सामने यह आदर्श उपस्थित करता है, मौन उपदेश ही करता है कि जो श्रेयस्कर कार्य करेगा, वह पुरस्कार्ह होगा और जो अश्रेयस्कर कार्य करेगा वह दण्डार्ह होगा। इसी प्रकार काव्य सत्कार्यों में प्रवृत्त और असत्कार्यों से निवृत्त कराता है।

धर्म का कारण प्रवृत्ति हुई और प्रवृत्ति का कारण काव्य। काव्य से अर्थ प्राप्ति प्रत्यक्षसिद्ध है, अर्थ से काम प्राप्ति और धर्म जनित फल में अनासक्त रहने से मुक्ति होती है। दर्पणकार के इस कथन के समर्थन में उपपत्तियां हैं कि इतनी लम्बी परम्परा को जोड़कर यदि काव्य को चतुर्वर्ग का कारण मान लिया जाए, तब तो किसी भी रूप से सम्बद्ध किसी भी वस्तु को किसी कार्य का कारण कहा जा सकता है इस प्रकार काव्य का और चतुर्वर्ग फल का यह सम्बन्ध कैसे स्वीकार किया जा सकता है? इसका समाधान दर्पणकार ने किया है कि काव्य से धम की प्राप्ति भगवान नारायण के चरणारविन्द की स्तुति के द्वारा सुप्रसिद्ध ही है।

इस प्रकार काव्य धर्म के प्रति साक्षात् कारण हो गया। यहां दर्पणकार ने एक बात और स्पष्ट की है कि यदि एक भी शब्द सुप्रयुक्त और सम्यक्ज्ञात है तो वह लोक और परलोक में कामधेनु के समान है। ऐसा करके सम्भवतः उन्होने जो काव्य स्तोत्रात्मक नहीं है अथवा जिन काव्यों में भगवान् की चर्चा नहीं है जो श्रृंगारिक है उनका फल स्पष्ट किया है।

काव्य से अर्थोपलब्धि प्रत्यक्षसिद्ध है। अर्थ कामप्रद है। काव्य से उत्पन्न धर्म के फल का परित्याग करने से मोक्ष की प्राप्ति भी काव्य के द्वारा हो सकती है अथवा मोक्ष के उपयोगी उपनिषदादि वाक्यों में व्युत्पत्ति पैदा करने के कारण काव्य मोक्ष का हेतु है। इससे यह सिद्ध हुआ है कि चतुर्वर्ग में किसी के प्रति तो काव्य साक्षात् कारण होता है और किसी के प्रति परम्परा से कारण है। धर्म और अर्थ के प्रति प्रायः इसकी साक्षात् कारणता होती है। काम और मोक्ष के प्रति कार्य–कारण भाव अंग नहीं माना जा सकता है। जैसे – दण्ड घट का कारण है किन्तु दण्ड साक्षात् घट नहीं बनाता है, चक्र में भमी पैदा करके ही घट का निर्माण करता है। श्रुतियां याग को स्वर्ग का कारण कहती हैं। उसमें अदृष्ट रहता है। याग अदृष्ट पैदा करता है और अदृष्ट से स्वर्ग है।

आचार्य विश्वनाथदेव – आचार्य विश्वनाथदेव बहुप्रयोजनवादी हैं। उन्होने काव्य को स्वर्ग और मोक्ष का जनक आदि कहकर स्वर्ग और मोक्ष के साथ–साथ अन्य प्रयोजनों की भांति भी प्राप्ति मानी है।

अन्य प्रयोजनों में वे मम्मट और भोज के काव्य–प्रयोजन से एकमत है। क्योकि दोनों के प्रयोजनों को उन्होने उद्धृत किया है। मम्मट के मत को उद्धृत करते हैं–

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।।

काव्य लक्षण

काव्य एवं काव्यशास्त्र की समलोचना के प्रारम्भ के साथ ही काव्य की परिभाषा का प्रारम्भ रहा है। काव्यत्व किस में निहित है– इस तथ्य को दृष्टि में रखकर विभिन्न आचार्यों ने काव्य के लक्षणों को प्रस्तुत किया है।

सर्वप्रथम आचार्य भामह ने काव्य का स्वरूप स्पष्ट रूप से उपस्थित किया और शब्द और अर्थ के सहभाव को काव्य कहा है।24 अग्निपुराणकार के अनुसार इष्ट अर्थ को पुष्ट करने वाली पदावली से युक्त ऐसा वाक्य काव्य कहलाता है, जिसमें अलंकार प्रकट हो और जो दोष–रहित और गुण–युक्त हो।25 इसमें काव्य की प्रायःबाह्य रूपरेखा स्पष्ट हो जाती है। आचार्य दण्डी इष्ट या चमत्कृत अर्थ से परिपूर्ण पदावली को काव्य–शरीर कहते हैं।26 वामन रीति को काव्य की आत्मा मानते हैं।27 और काव्य के स्वरूप पर विचार करते हुए कहते हैं कि अलंकार के ही कारण ग्रहण करने योग्य है और सौन्दर्य ही अलंकार है। रूद्रट भामह के समान शब्दार्थ को काव्य मानते हैं।28 आचार्य आनन्दवर्धन ने काव्यत्व के लिए शब्द और अर्थ का सहभाव आवश्यक बतलाते हुए कहा है कि वह शब्दार्थमय रचना, जिसमें रसिकों के मन को आननदित करने की क्षमता हो काव्य है।29 आचार्य कुन्तक ने शब्द और अर्थ दोनो के साहित्य को काव्य स्वीकार किया है।30 आचार्य क्षेमेन्द्र ने औचित्य को ही काव्य की आत्मा माना है।31 आचार्य भोज का स्थान संग्राहक आचार्यों में आता है, उनका मत मम्मट के मत के अधिक निकट है। किन्तु दोनो में भेद यह है कि मम्मट ने जहां अलंकारों का काव्य में गौण स्थान निर्धारित किया है वहां भोज अलंकारों से अलंकृत काव्य को भी स्वागत के योग्य समझते हैं। भोज कहते हैं कि– दोष रहित, गुणों से युक्त, अलंकारों से सुशोभित तथा रससंवलित दृश्य और श्रव्य को बनाता हुआ कवि यश और.....प्रीति को प्राप्त कर लेता है।32 आचार्य मम्मट कहते हैं कि दोषरहित एवं गुणालंकार युक्त शब्दार्थ ही काव्य है जो कहीं–कहीं स्फुट अलंकार रहित भी होता है। मम्मट शब्द और अर्थ दोनों की समष्टि को काव्य मानते हैं।33

आचार्य विश्वनाथ और विश्वनाथदेव के अनुसार काव्य लक्षण

आचार्य विश्वनाथ – आचार्य विश्वनाथ अपने काव्य–लक्षण की स्थापना करने से पूर्व पूर्ववर्ती आचार्यों के काव्य–लक्षणों का खण्डन करते हैं। सर्वप्रथम उन्होने मम्मट के काव्य–लक्षण का खण्डन किया है। मम्मट के मतानुसार – दोषरहित, गुणयुक्त और अलंकारों से अलंकृत परन्तु कहीं पर अलंकार से युक्त न हो तो भी शब्द और अर्थ काव्य है–

'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि।'

इस काव्य लक्षण के विशेषण पदों का खण्डन विश्वनाथ ने किया है। सर्वप्रथम अदोषौ पद का लिया है–

अदोषी – विश्वनाथ कहते हैं कि 'अदोषौ' पद का लक्षण में समावेश कर दोषरहित शब्दार्थ को काव्य मानेंगे तो निम्न पद्य को काव्य नहीं कहा जा सकेगा–

'न्यक्कारो शयमेव मे यदरयस्त्राऽप्यसौ तापसः
सोऽप्यत्रैव निहन्ति राक्षसकुलं, जीवव्यहो रावणः।
धिग्धिक्छक्रजितं, प्रबोधितवता किं कुम्भकर्णेन वा,
स्वर्गग्रामटिकाविलुण्ठनवृथोच्छूनैः किमेभिर्भुजैः।।

प्रस्तुत पद्य विधेयाऽविमर्श दोष से दूषित है अतः काव्य नहीं होना चाहिए। किन्तु ध्वनि के रहने से यह उत्तम काव्य माना गया है, अतः इस लक्षण में अव्याप्ति दोष है।

आगे विश्वनाथ कहते हैं कि इस पद्य में कुछ ही अंश दुष्ट है, सम्पूर्ण अंश नहीं है, ऐसा कहें तो जिस अंश में दोष है वह काव्य लक्षण का निवारक होगा। और जिस अंश में ध्वनि है वह काव्य के उत्कर्ष का निर्वाहक होगा। इस प्रकार विरोधी अंशों से खींचा जाकर यह काव्य व अकाव्य कुछ भी नहीं होगा। वस्तुतः श्रृति दुष्ट आदि दोष काव्य के किसी अंश को ही दूषित करते हैं यह बात नहीं है, वे सम्पूर्ण काव्य को ही दूषित करते हैं। जैसे कि काव्य का आत्मभत जो रस है, उसका अपकर्ष न करें

तो उन श्रुतिदुष्ट आदि को दोष नहीं माना जाता है। यदि यह नहीं मानेंगे तो नित्य दोष और अनित्य दोष और अनित्य दोष की व्यवस्था भी नहीं होगी।

निष्कर्ष

काव्य प्रयोजन के विषय में आचार्य एकमत नहीं है। पूर्ववर्ती आचार्यों से प्रभावित होते हुए भी विश्वनाथ ने पुरूषार्थ–चतुष्ट्य को काव्य का प्रयोजन माना है और स्पष्ट किया है कि काव्य से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है। ये सभी परस्पर पूर्णतः एक–दूसरे से जुड़े हुए भी हैं। विश्वनाथ ने स्वर्ग और मोक्ष के साथ–साथ यशोलाथ, अर्थप्राप्ति, व्यवहार–ज्ञान, अनिष्ट निवारण, परमानन्दप्राप्ति, कान्तासम्मित उपदेश, कीर्ति और प्रीति को काव्य प्रयोजन के रूप में वर्णन कर मौलिकता का परिचय दिया है। यद्यपि उनके कुछ प्रयोजन पुरूषार्थ–चतुष्ट्य में समाहित प्रतीत होते हैं। तदपि स्वर्ग की चर्चा कर उन्होने विश्वनाथ के मत से स्पष्टतः भिन्नता प्राप्त की है।

आचार्य विश्वनार्थ और आचार्य विश्वनाथदेव दोनो ही आचार्यों ने अपने काव्य–लक्ष्णों में रस को प्रधान माना है। विश्वनाथ के काव्य लक्षण विषयक विचार स्पष्ट हैं। वे रसवादी आचार्यों के समान रस को काव्य की आत्मा मानकर रसयुक्त वाक्य ही काव्य है– ऐसा काव्य का लक्षण करते हैं। उन्होने मम्मट, कुन्तक आदि आचार्यों के मतों का खण्डन किया है, जिससे प्रतीत होता है कि उन्हें लक्षणाधायक न होने से लक्षण में किसी भी विशेषण का सन्निवेश उचित प्रतीत नहीं होता है। इस प्रसंग में विश्वनाथदेव के विचार बहुत अस्पष्ट से प्रतीत होते हैं। प्रारम्भ में वे शब्दकाव्यत्ववादी मत को स्वीकार करते हैं। अपना काव्य लक्षण देने के तत्पश्चात् ''शब्दः काव्यम्'' मत का खण्डन अन्य आचार्यों द्वारा किया हुआ बताते हैं, किन्तु दूसरे ही क्षण वे ''शब्दः काव्यं'' मत को ''काव्यं करोति'' की व्याख्या करते हुए स्वीकार कर लेते हैं कि कवि शब्दों को ही बनाता है अर्थों का नहीं बनाता है। वे अपने काव्य–लक्षण ''जायते परमानन्दो'' में ''श्रवणमात्रेण'' शब्द प्रयुक्त करते हैं जिससे यह स्पष्ट है कि वे ''शब्दः काव्यम्'' मत के अनुयायी हैं। इसके अतिरिक्त द्वितीय तरंग के प्रारम्भ में वे ''शब्दः काव्यमित्यभिहित'' कहकर पूर्णतः '' शब्दः काव्यम्'' का ही समर्थन करते हैं। सिन्धुकार ''शब्दार्थ'' के समूह को काव्य मानने से भी अस्वीकार नहीं करते हैं, यद्यपि वे ''शब्दार्थौकाव्यम्'' की चर्चा करते हैं। शब्द और अर्थ के समूह में काव्यत्व जाति मानने पर संकर दोष मानते हैं। इसलिए वे काव्यत्व को अखण्ड कहते हैं।

दर्पणकार और सिन्धुकार काव्यप्रकाशकार मम्मट एवं उनके अनुयायियों के द्वारा माने गये काव्य–लक्षण का खण्डन करते हैं। दर्पणकार ने सबसे पहले मम्मट और उसी क्रम में अन्य आचार्यों के काव्यलक्षण का खण्डन किया है। दर्पणकार से प्रभावित होकर सिन्धुकार भी खण्डन करते हैं। सिन्धुकार ने इतना सा भेद किया है कि वे मम्मट का काव्यलक्षण उद्धृत न कर मात्र ''केचित्तु'' कहकर मम्मट के अनुयायियों में प्रसिद्ध ''अदोषौ तद्वि'' इस काव्य लक्षण का खण्ड करते हैं।

विश्वनाथ का अनुसरण करते हुए भी अन्त में विश्वनाथदेव और विश्वनाथ में ये भिन्नता आ जाती है। कि दर्पणकार ने जहां इस काव्य लक्षण को दोष युक्त बताकर अस्वीकार कर दिया है वहीं सिन्धुकार विश्वनाथदेव ने अदोषौ और सगुणौ का यह अर्थ किया है कि कवि को यह प्रयत्न करना चाहिए कि उसका काव्य दोष से रहित और गुण से युक्त हो। इसलिए जहां दर्पणकार ने भोज के ''अदोषं गुणवत् काव्यम्'' को भी अस्वीकार कर दिया है, वहीं विश्वनाथदेव ने इसे अपना पूर्ण समर्थन देते हुए काव्य प्रयोजन व लक्षण के रूप में स्वीकार किया है।

आनन्द को काव्य का फल बहुत पहले से ही माना जाता है। विश्वनाथ ने 'रस' कहकर और विश्वनाथदेव ने उसे ''ब्रह्मनन्दसहोदरपरमानन्द'' और ''स्वर्ग विशेष'' कहकर अतिमहत्वपूर्ण स्थन प्रदत्त किया है। यहीं इनके काव्य लक्षण में उनकी मौलिकता दिखाई देती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1 नाट्यशास्त्र, सुधा रस्तोगी चौखम्भा कृष्णदास अकादमी वाराणसी, संस्करण–1999
2 दशरूपक, डॉ0 श्री निवास शास्त्री, साहित्य भण्डार मेरठ, संस्करण–1969।
3 साहित्यदर्पण, डॉ0 कमलादेवी, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद, संस्करण–2017।
4 साहित्यदर्पण, डॉ0 सत्यव्रत सिह, चौखम्भा विद्या भवन वाराणसी, संस्करण – 2018।
5 काव्यप्रकाश, स्व. आचार्य विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि, 'आज' भवन सन्तकवीर मार्ग वाराणसी, संस्करण 2014

सन्दर्भ टिप्पणी

ग्रन्थ	अंक श्लोक संख्या पेज
काव्यप्रकाश	पेज 56
दशरूपक	1/8
सा.दर्पण	6/54